शिखरों

शंखमुखी शिखरों पर

लीलाधर शर्मा

प्रकाशक
जगूड़ी प्रकाशन
सरस्वती सदन
गोंवला
उत्तरकाशी

मूल्य : २ रुपया

मेष-संक्रान्ति २०२१

मुद्रक :
श्याम वाराणसी प्रेस प्रा० लि०
खजुरी
वाराणसी

प्रस्तावना

हिमालय भारतीय संस्कृति का प्रतीक ही नहीं, भारतीय साहित्य का एक शाश्वत प्रेरणा-स्रोत भी है। भारतीय संस्कृति के सभी उद्गाता कवियों ने नगाधिराज देवतात्मा हिमालय की पावन सुषुमा का यशोगान किया है। फिर उन कवियों का क्या कहना जिन्होंने हिमवान की "पार्वती" भूमि में जन्म लिया और इस पृथ्वी पर आँख खुलते ही उस विराट सौन्दर्य सत्ता का साक्षात्कार किया।

हिमालय से दूर गङ्गा की घाटी तथा मध्य और दक्षिण भारत मे रहने वाले कवि हिमालय की कल्पना भर करते हैं। किन्तु हिमालय की गोद में खेलते हुए पलने और विकसित होने वाले कवि उसकी विराट ऊँचाइयों और गहराइयों का प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं। इस सुविधा के कारण हिमालय की उपत्यकाओं में उत्पन्न होने वाला कवि प्रकृति की सुकुमार और विराट छवियों का जैसा सहज अङ्कन कर सकता है वैसा करना इतर देशीय कवियों के लिए शायद सम्भव नही है। कालिदास से लेकर सुमित्रानन्दन पन्त और चन्द्रकुँवर बर्त्वाल तक इन हिमवान पुत्र कवियों की परम्परा निरन्तर चलती आयी है। प्रस्तुत ग्रन्थ "शंखमुखी शिखरों पर" के नवयुवक कवि श्री लीलाधर शर्मा भी उसी परम्परा की शृङ्खला की एक कड़ी हैं।

हिमालय का कवि सदा से दो बातों के लिए अन्य कवियों से विशिष्ट रहा है। एक तो यह कि उसकी कविताओं में जाने-अनजाने हिमालय की छाया अवश्य अङ्कित हो जाती है। दूसरी यह कि प्रेम के उद्दाम रूपों का चाहे वे विरह के हों या मिलन के, वह अकुण्ठ भाव से वर्णन करता है।

कालिदास के 'मेघदूत' का विरह वर्णन और 'कुमारसम्भव' के आठवें सर्ग का संयोग श्रृङ्गार-वर्णन-इसका प्रमाण है। प्रस्तुत संग्रह की कविताओ मे भी ये दोनों प्रवृत्तियां स्थान-स्थान पर परिलक्षित होती हैं।

उत्तरकाशी का कवि काशी के घाटों पर बैठ कर जब किसी की, याद करता है तो उसे सामने हिमालय की वे ऊँची चोटियाँ, गहरी घाटिय ढालों पर पर्वत के शिशु की तरह अन्धेरे मे सोये गांव, चीड़ और देवदारु के वन, चोटी से दूध की लकीर की तरह दिखाई पड़ने वाली तलवाहिनी सरिताएँ और हिम-श्रृङ्गों की अनन्त पंक्तियां दिखाई पड़ती हैं। 'मेघदूत' के यक्ष की तरह इस कवि को भी अपनी अलकापुरी की प्रेयसि उदास और विषण्ण दिखाई पड़ती है।

आज मेरी याद की अलकापुरी में
लहर आयी सांवरी अलकें तुम्हारी !
श्रृङ्ग की ऊँचाइयों को नमन करती
छलक आयी पूजने पलकें तुम्हारी !

जाने किस विवशता के कारण कालिदास को 'अपनी यादो की अलकापुरी' छोड़नी पड़ी थी। इस विषय में अनेक प्रकार के अनुमानो के लिए अवकाश है। सुमित्रानन्दन पन्त को भी किसी विवशता बस ही 'अल्मोड़ा' छोड़ना पड़ा होगा। 'शंखमुखी शिखरों पर'' के कवि को भी अपनी विवशताओं के कारण ही हिमाद्रि की सौन्दर्यमयी धरती छोड़कर काशी की जनाकुल गलियों में शरण लेनी पड़ी है। किन्तु उसकी पर्वतीय स्मृतियां उसे क्षण-भर के लिए भी छोड़ नहीं पाती है।

परिचित सी छाँह हिली श्रृङ्ग के उतार में
मनचाही पीर मिली चीड़ की बयार में !

× × ×

रेखा सी राह बिछा पहचाना प्यार
लगता है दूर कहीं घाटी के पार !
चूड़ी की छमक मुझे टेरती थकी
काजल की रेख मोड़ हेरती थकी !

इस प्रकार इन कविताओं में हिमालय एक अनाघ्रात कुसुम की तरह अपनी पूरी ताजगी और टटकेपन के साथ उभर सका है।

यह कवि का प्रथम काव्य-संग्रह है। कवि अभी नवोदित है। अतः इस संग्रह की कविताओं में प्रौढ़ता और पूर्णता की खोज करना कवि के साथ अन्याय करना होगा। किन्तु इन कविताओं में कवि की प्रतिभा, कल्पना प्रवणता और संवेदनशील स्पन्दन वर्तमान है।

मैं आशा करता हूँ कि प्राचीन और आधुनिक साहित्य के सम्यक अध्ययन, निरन्तर काव्याभ्यास तथा आधुनिक भावबोध के परिचय के साथ उसकी कविताओं में निखार और कलात्मकता आती जायेगी। इन शब्दों के साथ मैं प्रस्तुत संग्रह को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ और साथ ही कवि के उज्ज्वल भविष्य की मङ्गल कामना करता हूँ।

हिन्दी विभाग
संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी
२।२।६४

शम्भुनाथ सिंह

'शंखमुखी शिखरों पर' के अल्पतोय झरने यदि आप की एक भी धड़कन को नहला सके, एक भी गंदुमी झोंका अन्तस् की गहराइयों में पड़ी स्मृति पुस्तक के एक भी पृष्ठ को पलटने में समर्थ हो सके तो मैं अपनी नन्हीं-नन्ही फूँकों के प्रथम प्रयास को सफल समझूँगा और बजते हुए शंख से गुंजित घाटी में बादलों को उकसाने की क्षमता अर्जित कर सकूँगा।

डी० ३/१० मीरघाट
वाराणसी
दि० ११ मार्च १९६४

लीलाधर शर्मा

अनुक्रमणिका

अनचाहा मैं

कोलई की
शाख हिली
खिड़की के पर्दे से
झोंकों की बात चली !
घुप-घुप कर
आँख मार
लैम्प, बुझा,
हर कोने
टेबल पर
कुर्सी पर
खुली हुई पुस्तक पर
बैठ गया अन्धकार !
माचिस नहीं मिल पायी
कमरे में फैल गया
एक मात्र इन्तजार
नींद का !

—:*:—

क्वाँरी प्रीत

मुस्कानों का बसन्त
स्मृति के पतझरों में
पल्लवी चुभन लेकर,
चैत के दरवाज़े
बादाम फूलों सा महमहाता प्यार
मेरे रेतीले मन को उर्वर बना देता है !

मिलन का एकान्त
असन्दर्भ बातों की डायरी सा
अचानक खुल गया
मेरे मानस परोक्षों में !
एक-एक क्षण
आनन्द के हिमालयों सा
लगता है,
ज्यों ही एक खिड़की से
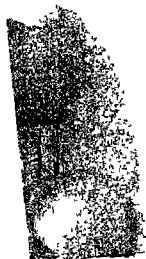
मेरा चाँद
हाँ ! हाँ ! सिर्फ मेरा चाँद
उगता है !

जिससे एषणाओं के
भाँवर नहीं फिरे मैंने
जिसकी रूपाभ चाँदनी को
नहीं पिन्हाए सुहाग के गहने
उसका 'देय' भला मुझे क्यों 'अदेय' हो !

मानवी-पाशवी कोख से
जहाँ कहीं भी कोई शिशु जनमे,
दिशा छोरों तक जहाँ कहीं भी
माटी के गर्भ से कोई अंकुर किलके,
अदृश्य-अस्पृश्य सृजक की
प्यार भरी आकांक्षाओं का
विराट सङ्कल्प दोहराये
तो उन सबको मेरा प्यार पहुँचे !

किसी की क्वाँरी प्रीत ने मुझे
व्यापक शून्य की

आखिरी क्षमताओं का
अन्वेषक बना दिया,
परिधि के नाम पर
कहाँ लकीर खींच दूँ ?
किसी निश्चय से पूर्व ही
मेरे कलेजे से
कटने-बँटने की टीस उठती है !

—:*:—

दर्द की वर्षगाँठ

यादों के
आस-पास
खिले हुए
आँसुओं के
नये फूल मेरे हैं।
बीतते पहरों की
वक्ष उगी दूर्वा पर
अनदेखी प्रेयसी के
मृदुल-तरल हस्ताक्षर
किसने उकेरे हैं ?
कनेर पाँखी किरणों ने
द्वार की दरारों से
रूपहली उँगलियों के
क्यों इतने इंगित
बिखेरे हैं ?

सिर्फ
छटपटाती लहरों की
दर्पण सी हथेली में
प्रतिबिम्ब निरखते
ढहे कूल मेरे हैं !
केसर का
अनचाहा
दर्द आज
वर्षगाँठ
मना रहा है,
गुलाबों की
टहनी के
अगन्ध-शूल मेरे हैं !

—:*:—

प्यासा आग्रह

ग्रीष्म का आतप,
सागर का उच्छ्वसित
स्निग्ध प्रतिदान !
समय को नहलाते
शिखरों के
झर-झराते अजस्र निर्झर !
मरमराते पतझर के
गलित पत्रों की खाद,
अभिनव उठान पल्लवों की !
पथरीले-मटीले किनारों को
छप-छपाते
क्षण उठते क्षण मिटते
नदियों के हिलकोरे !
कार्तिक के धान कटे नग्न खेत,
उजड़े अवगुंठन पर

विधवा मेड़ों की
उपेक्षित उदासी !
आखों में तैर-तैर
भीगे हुए इन्द्र-धनुष
अवगाहित सुधियों के
परिवेश में परिवर्तित
रश्मि, तम
उषाएँ और सन्ध्याएँ,
एक स्वर
पुकारता है
किसी का
प्यासा आग्रह !
बादलों की फरफराती
ध्वजाओं पर
उभरना चाहती है
कोई सदा नीरा
ऋचा क्वाँरी !

—:*:—

वेदना की भुजाएँ

खुले हुए घावों के
आकुल उद्वेगों पर
झुकी-झुकी
कनखियों के
मधुर-मधुर सेंक !
संकल्पित कुंकुम
विषादों के नीले
जलधि में बिखरी,
क्वाँरी रह गयी मेरी
यादों की उषा !
पाँखों के आँसू
मेरे आँसू हैं
झरनों की छर-छराहट में
कराह रहा है मेरा हृदय !
किरणों के माथे पर

सुरभित साँसों के
इन्द्र धनुष फैले हैं !
चाहता हूँ भरना
आलिंगन में
असीम शून्य को
और समस्त पृथ्वी को !

एक भावोद्वेल

बहुत-सारी सिसकियों के
साथ नंगे अश्रु आये,
तुम न आये जिन्दगी के गाँव !
गन्ध के हिलने लगे हैं पङ्ख,
केसर रच रही है
दिशाओं के अङ्ग,
कलियों के मोहल्ले
बज रहे हैं शङ्ख
भौंरों के !
उदासी की
हथेली पर
कर दिये हैं
मुग्ध हस्ताक्षर
तुम्हारी याद ने !
पहुँच जाये अगर तुम तक

एक भावोद्वेल
मेरी इन्द्र-धनुषी
ऋचाओं का
एक लहरिल गान
मेरी ऊर्ध्वगामी
ध्वजाओं का,
समझ लूँगा
वेदनाएँ
बन चुकी हैं
प्रार्थनाएँ !

—:*:—

ऋतुओं का दीप

रोमांचित हुई रेत
हरी-हरी दूब उगी !
आज नयी कोंपल ने
घूँघट उठाया है,
केले के पात हिले
एक-एक हिलन ने
अतीत को संभाल लिया,
एक-एक आग्रह की
प्यास बुझी !
ठूँठों के स्वप्न हँसे
पतझर के जाने से !
फूल-फूल केसर का
नीड़ बना,
किसके मन चोट लगी
भौंरे के गाने से ?

बल्कि यहा

एक ओर सुरभि को

झोंकों का पँख मिला

जीवन के दरवाजे

ऋतुओं का

यह पहला दीप जला !

अयाचित आशीष

अपने चैतन्य को
बिठाये शिला के शीश.
प्रपातों की
भाषा में
पर्वतों के अन्तर्द्वन्द्व
आत्मसात करने की
सोच रहा था मैं !
सोचा था...
गुहाओं की
तरुण तम राशि का
चीत्कार सुनूँगा आज,
सोचा था...
ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों के
हेय भाव बाँचूँगा,
गिनूँगा

लहरों में
उठते मिटते
बुल-बुलों का
अवसान !
किन्तु ऐसा
कुछ भी न हुआ,
नहाई हुई
सुबह की क्वाँरी हवा
सुमनों के उच्छ्वास पहन
गल बाँहीं डाल गयी,
अविवेक के
श्रवण खुले
चक्षु खुले
सुन रहा हूँ झरनों की सरगम,
रश्मियाँ नङ्गी नहाने लगी हैं
देरहा है इन्द्र धनुषी वस्त्र
मेरा अनखुला संकोच,
कितने अयाचित आशीष
मुझको देरहा है रूप !

एक साँवला प्यार

आकाश दिल
आदमी हूँ मैं
मेरे पास अक्रान्त
आवाजें हैं!
क्षितिजों की
सीमाएँ,
जिन्हें रौंदती हुई
बढ़ गयी
मेरी व्यापक
क्षमताएँ
किन्तु
मेरी आकाश गंगा में
कभी बाढ़ नहीं आयी,
मेरे पास
तट ही नहीं है
जिन्हें मैं

भंग करने की सोचूँ !
एक साँवला प्यार है मेरे पास
जिसे पाने के लिए
बहुत बार भेजे हैं
धरती ने
बादलों के उपहार !
सुरभि की पाती पर
नयी कविता,
स्वर्ण शृङ्खला सी
वह मेरी धड़कनों के
आस-पास
पिघल गयी,
बिखरीं जीवन में
उषाएँ, संध्याएँ !

—:*:—

सौन्दर्य का शोषण

चाँदनी का पीताभ मुख
मेरी आक्षितिज हथेलियों के

सम्पुट में स्थिर था!
उषा की आहट पाते ही
यह कहने से पूर्व ही, कि—
"अच्छा मैं चली"
सिमिट कर
पश्चिम के ढलाव में खो गयी!

उषा को मैं
अपनी हथेलियों के
शून्य सम्पुट में
नहीं ले सकता,

क्योंकि वह दिनों-दिन
अधिक रक्तिम हो रही है!
और मेरी चाँदनी
रोज पीली
बिल्कुल पीली पड़ रही है!

—:*:—

अग्रगामी के नाम

अभी-अभी जो क्षण
छोड़ मुझे गुजर गया
हवा के झोंको!
यदि तुम्हें
वह कहीं मिले
तो उसे मेरा नमस्ते कह देना
और कहना
कि अच्छा किया तुमने
चले गए, अन्यथा
इन नये लमहों की
आत्माओं से मैं
अनमिला ही रह जाता!

इन क्वाँरे पन्नों पर
गीत का टीका
नहीं लग पाता,

न हथेलियों पर
म महत्व पूर्ण ही सही
रा हस्ताक्षर नहीं हो पाता !

शिथिल-अनहारे
यत्न जारी हैं,
हुत जल्दी ही
म से नहीं तो
अपने बचपन से
में अवश्य मिल सकूँगा !

—:*:—

शृङ्खलित प्यार

चोटी से घाटी तक
हिल रही होंगी
अँधेरे की टाँगें,
सो रहा होगा सारा गाँव !

दरवाजे को थपका रही होंगी
चीड़ों की आवारा साँसें !

ओबरे में बज रही होगी
गाय के गले की घंटी
जब कोई बैल उसे छेड़ता होगा !

गले बँधी साँकल से
वह है या नहीं
किन्तु मैं अवश्य क्षुब्ध हूँ !

तुषार भीगे
स्लेटी छतों के ढलाव
टप ! टप ! ... टप ! टप !
टपक रहे होंगे
कच्चे आँगन में !

—:*:—

एक याद

क्षितिज पार
एक याद टेरती रही !

बीत गये
आस के गुलाबों के
झरे पंख !
बिखर गए अनबोले
सपने ज्यों पारिजात !
पथ ने मार दिए
गति को हजार डंक !
किसको दिखलाऊँ
यह जहरीला गात !

भूल गया
कहने से पूर्व ही

किसी का नाम,
स्पर्श हीन
एक बांह घेरती रही !

गीतों की गंध चुभी
साँसों के मृदुल अंग !
विलम गयी
चरणों की
तीव्रतम उठान !
कई छलक पड़े
जीवन में दर्दीले रंग !
मिला लहरों को
झाड़ हीन
शून्य सा ढलान !

डूब गया
बह न सका
पत्थर ही तो था मैं,
एक स्निग्ध दृष्टि
पंथ हेरती रही !

—:*:—

रुख ही कुछ ऐसा था

सूखी टहनी पर
अटक गया एक फूल,
सूखे तिनकों ने
अर्जित करली ऊँचाई,
हवा का
रुख ही कुछ ऐसा था !
दृगों की परिधि में
एक मुस्कान
जो मेरे लिए नहीं थी
तैर गयी,
तुमसे प्यार करने की
एक आकाँक्षा
परिधि में
व्यास बन कर
खिंच गयी !

किन्तु
मन के अलिखित
पन्ने पर
स्वीकृति रूप
तुम्हारा हस्ताक्षर
अपेक्षित है मुझे !
बसन्त के पुराने आग्रहों की
थोथी मान्यता, व
उम्र का मौसमी ज्वार
मत समझना इसे !
ऐच्छिक सत्य का
यह मौलिक अन्वय है,
व्याख्या तो शायद
तुम भी नहीं कर सकोगी !
मैं कुछ टीस उठा हूँ, इससे-
आक्षेप मत करना
मेरी क्षमताओं पर,
मन का दुख ही कुछ ऐसा था !

—:*:—

संशोधन

साँसों की पंक्ति-पंक्ति
इतना अशुद्ध ही चला था
जीवन का निबन्ध
कि मुझे अपना ही
अर्थ नहीं आता था!
तुम्हारे प्यार के
मधुर संशोधन ने
गीत भर दिए।
मैं स्वयं का अर्थ
समझने लग गया
कि मेरा हृदय
प्यार का एक
अलिखित महाकाव्य है!

—:*:—

तुम्हारी याद आती है

तुम्हारे एक फूल की प्रतीक्षा में
मेरी हर साँझ कुंभला जाती है!
पूरब से पश्चिम तक

बाँहों के घेरे में
चूमता है चाँद जब
सांवली निशा का गात
रूप के उजेरे में,

मेरी चेतना
तुम्हारी एक आहट के लिए
सुध-बुध भूल जाती है!

क्षितिज के द्वार पार निखर उठा
उषा का गुलाबी समर्पण,
मृदुल हथकुलियों में

थामे हुए दर्पण,
सुबह आंगन में जब
दूब मुस्कुराती है
तुम्हारी याद आती है!

—:*:—
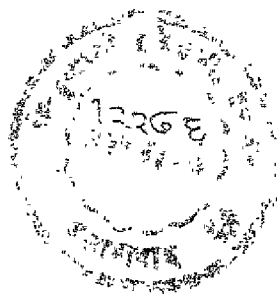
गमकती परिधि

नये-नये अंकुरों का उगना
धड़कनों के आस-पास
मुझे लगता है जैसे मैं
बसन्त जी रहा हूँ !

साँसों की टहनी ने
खुशी की हिलन हिली,
तरल छलकाव से भर गयी आँखें,

नयी कविता सी
तरल - सरल
खिच गयी गालों पर
इकहरी रेखा !
दर्द के शिखरों पर
फैल गये
इन्द्र धनुष,

अपार शोभाओं से
भर गयी मन घाटी,

उम्र के गमले में
गमक उठी
जीवन की माटी !

—:*:—

शंकित सत्य : शेष आकांक्षा

अन्तस की तलैया में
तुम डाल गये
दुख दर्द की कई-कई शिलाएं !
तट बंध तोड़ पलकों के
छलक पड़ा पानी
रूठ गयी मेरी क्वांरी नादानी !
माटी की छाती पर उठ रहे
मकानों ने,
ऊर्ध्व मुखी
भौतिकता की
इस्पाती चिमनियों की
धूमिल ध्वजाओं ने
शून्य को घटाया,
किन्तु
कुछ भी नहीं टूटा
कुछ भी नहीं छलका !

निमिष, दिवस
माह, वर्ष डूब गए
और मैं आकंठ निमग्न हूँ
हाथ पाँव मारता
साँसो से
सिर्फ तुम्हारी याद बाँचता!

न जाने कब
इस अथाह में
गोता खा जाऊँगा,
अनमिला ही तुमसे
हिम फूली मुस्कानों की
छांव तले
हमेशा-हमेशा के लिए सो जाऊँ!

—:*:—

माघ के महीने सिहरती हथेलियाँ

बिजुरी की हँसी झरी
शिशिर के आँगन में,
घास छुपी हरी-भरी
शिखरों के भाल छुपे
श्वेत-श्वेत आँचल में !

घर-घर से
धुवाँ उठा
गाँव के बीच कहीं ढोल बजा !
सांझ हुई
उलझ गए
चीड़ की कतारों में
मेघों के फाहे !

वन्द हैं किवाड़
और खिड़कियाँ
धधकती अंगीठी के
आस - पास
सिहरती हथेलियाँ !

—:*:—

टूटते सम्पर्क : जुड़ते रिश्ते

स्रोत पर सेतु
बाँध दिया किसने ?
चाँद की जुन्हाई सी
हाथ की लुनाई को
थाम लिया किसने ?

प्रण सारे विस्मृत हैं
व्रण सारे मुखरित हैं,
अवाक्
किन्तु खुश
अर्द्ध चक्षु
हृदय भिक्षु
मुदित पर रिक्त पात्र,
सिसकते गीतों से
भरा हुआ एक मात्र,
प्रस्तुत है !

एक ओर
मिलन जन्य हर्ष का
अछोर सिन्धु,
एक ओर
स्नेह जन्य
छलक रहे नयन बिन्दु !

एक ही मण्डप पर
मिलन है विदाई
पुनः पुन प्राण तुम्हें
दे रहे बधाई !

—:*:—

धरती की सौंधी गंध

क्षितिज से विकीर्ण उर्मिल
पिंग पारद
सतत झिल-मिल
बिछ रहा है मेदनी के अंक—
में निःशंक !
वर्तुल रश्मि माली
कंचनी आभरणवाली
झोलियाँ औंधा किए
बरसा रहा है प्रेयसी पर
और
अभिनव-अलंकारों की छुभन में
लाख गुनती रही मन में
अटपटी सी प्रणय भाषा !
किन्तु क्या निष्कर्ष ?
मीठी गुद-बुदी से

भरा-पूरा नव स्पर्श
रह-रह जगाता सुम सपने !
ज्यों धवल नवनीत
लौंदी
छोड़ दी उच्छ्वास सौंधी
पवन की बाँहों लहरती
सरकती वह छागई है !
सूर्य पर साकार होकर
एक गेहुँआ मेघ बाला,
कह रही है—
'मुझे बाँहों में समेटो
आ गई हूँ मुझे चूमो ! खूब चूमो !
ताकि मेरी आँख से
लाज के आँसू झरें
वे खेत लहरें,
अपलक निखरता है मुझे
वह खेत वाला !

—:*:—

भविष्य का आग्रह

जिसने हर झोंका बाँचा है
जगह बदलते नक्षत्रों की
बात सुनी,
देखा है
संध्याओं और उषाओं का
अरुण-अरुण शृंगार,
जिसने भोगी
कुछ मीठी-मीठी व्यथा,
सतह के क्वाँरे-क्वाँरे
उच्छ्वासों की गरमाहट,
मानस परोक्षों में
कुल बुला उठा
पर्वीला क्षण,
कुछ हिला व्यतीती पर्त केन्द्र,

भोग रहा हूँ पतझर में
बल्कल के नीचे
मधुर सृजन की
एक पल्लवी व्याकुलता !

—:*:—

दोहरी जिन्दगी

शरद की तुषार न्हाई दूबसी
स्मृति को किनारों पर
बिछी हो तुम मौन !
दुग्धस्रावी बेला में
पहली किरण की
गुलाबी चुभन ने
तुम्हें मेरे दृष्टि पथ पर
खड़ा कर दिया !
तुम्हारी आँखों ने किया
प्यार को नमन,
मेरे चारों ओर
बिखर गये
असंख्य परी हास !
जी रहा हूँ
दोहरी जिन्दगी
एक तुमसे दूर
एक तेरे पास !

—:※:—

सिहर उठा होगा यादों का गाँव

लट्टुओं की रोशनी में
वाराणसी के घाटों का
सोया हुआ वीरान,
उत्तर काशी की
बाँहों से
भागती हुई गंगा
यहाँ सीढ़ियाँ
छप-छपा रही है!

आज की समर्पित
साँझ को
तुमने जब कलश भरा होगा,
अवश्य कुछ कहा होगा
तुम्हारी धड़कनों ने,
किन्तु तुम समझती हो

सारी विवशताएँ

गंगा उल्टी नहीं बह सकती,
मेरा स्पर्श तुम तक
नहीं पहुँच सकता !

तुमने धोया होगा
अंजुली से छपका कर पानी
प्याले में ढली हुई
चाय सा मुख !
अनचाहे पिंडलियों तक
भिगो गई होगी लहर
गोरे-गोरे पाँव ।
कमरे में जाते ही
बाँची होगी तुमने
मेरी पुरानी चिट्ठी
सिहर उठा होगा यादों का गाँव !

हमें भी जुटना है

शरद के रजत घन
तट पर शून्य के फैल गये
फेन से भर गया हो
कूल ज्यों सागर का
इस समय जरूर शून्य घट गया!
मिट्टी से नही तो धुएँ से ही सही
एन केन प्रकारेण
सूखे हुए, घास उगी सरोवर की—
नीली-नीली शून्यता का
लघु ही सही
मगर एक भाग पट गया!
माना कि बिखरेंगे
कुछ ही क्षणों के बाद
भग्न हुए अंडों के
श्वेत-श्वेत छिलकों से

भार लघु बादल ये,
रिक्त पात्र एक जगह
जुटे हुए पागल से !
किन्तु ये घिरे तो सही...
हमें भी घटाना है
अन्तर दिल-दिल का
ताड़ जो खड़ा हुआ है
द्वेषों के तिल का
काटना है उसे और
मोड़ना पड़ेगा पथ
विचारों के मरघट का !
प्रेम के खेतों में
शान्ति के द्वार कहीं
हमें भी जुटना है
हमें भी घिरना है !

—:*:—

अन्धकार

सरक गया परदा सा
शून्य की सलाखों में!
संध्या के
सिन्दूरी
पैरों से उड़ी हुई
नभ की महीन धूल
बैठ गयी आँखों में!
कोमल है
पके हुए
जामुन के
छिलके सा
किन्तु
शूलों से कटा नहीं
ठूँठ हुए चीड़ों की
टहनी से फटा नहीं!
कँटीली झाड़ियों को,

फूलों के महमहाते
उजले सपनों को,
गरजती गंगा की
बलखाती लहरों को
मुँह बाये
चुपके से निगल गया,
पर्वत की खूँटी पर
टंगा हुआ
अंधकार
फिसल गया !

—:*:—

आज कई बर्षों के बाद

उकेर गयी एक चित्र याद
आज कई बर्षों के बाद !

छलक पड़ा आँसू का ताल
डूब गयी विस्मृति की दूब
विहँस पड़े रेती के गाल
मृगतृणा सँवर गयी खूब,

बिखेर गयी एक किरण हास
आज कई वर्षों के बाद !

सपनों के गाँव जली धूप
फैल गयी गन्ध की बहार
आँखों में बिखर गया रूप
साँसों में तैरती बयार,

दीप जला आशा के द्वार
आज कई बर्षों के बाद !

पाहुन की राह पर हजार
फैल गये सतरंगी थान
छेड़ दिया तुमने हर तार
उमग पड़े सात सुरी गान,

उधर गयी होंठों की सीवन
आज कई वर्षों के बाद !

—:*:—

नीड़-हीन पाखी मैं

घाटी में बिहगों ने सन्ध्या का नाम लिया
सूरज की एक-एक किरण ने प्रणाम किया !

शाख हिली विदा ! विदा ! दूर के प्रवासी को
पाँख-पाँख झकझोरे शून्य की उदासी को
क्षितिज के मुण्डेरे ने केसर का जाम पिया !

बोझिल कर दिया बात गन्धुमी ऋचाओं ने
शिखरों पर टंगी हुई तिमिर की ध्वजाओं ने
व्योम के किनारों को कोनों पर थाम लिया !

माटी की छाती पर अश्रु झिरे रात-रात
दुखियारे घावों की बिखर गई बात-बात
नीड़-हीन पाखी मैं हर आखर बाँच गया !

—:*:—

हिम-फूल

आज मेरी याद की अलका पुरी में
लहर आयीं साँवरी अलकें तुम्हारी !
घाटियों के देवता को नमन करती
छलक आयीं पूजने पलकें तुम्हारी !

किन्तु मेरे प्यार की शीतल धरा पर
कौन से वरदान के हिम-फूल बिखरे ?
क्या तुम्हारी प्रीत का नन्दन झरा ? या
मुस्कुराहट के अदेखे कूल निखरे ?

कल्पना खगि के सलोने पंख छूकर
विरह व्याकुल पवन सिहरन भर रहा है !
मैं तुम्हारा भेद सुलझाने लगूँ जब
एक भूला स्वप्न उलझन भर रहा है !

प्रिय तुम्हारे गाँव की गलियाँ न जाने
चरण पुलकन को संभाले हैं कहाँ पर !
किन्तु घाटी आज माटी को छुपा कर
हँस रही है हिम हँसी की तह पहन कर !

स्वप्न घुंघराले मधुर हैं आज बरसे
उस निशा के जो पहाड़ों में जगी थी !
वक्ष माला झर गयी आलिंगनों से
उस दिशा में जो सितारों को मिली थी !

— :*: —

सृजन के गुलाब

जब-जब भी मेघ घुले
बरसाती झरनों के
गीत हुए मट मैले
धरती की सौंधिया
साँसों के पंख हिले
पावस के कलश गए रीत
छिड़ा सिहरन के तारों में
द्वन्द,
आँख मार
दहली पर बैठ गयी शीत !
आँगन में मुरझाई
हेमन्ती धूप खड़ी,
शिशिर की ठिठुरी रेती में
वर्ष वदन

कसुम दशन

चैत हँसा

पतझर की

छाती पर

सृजन के गुलाब खिले !

—:*:—

समर्पण

मुद्रित ऋचाएँ तो
एक छलकाव है
मेरे स्नेह अम्बुधि का !
अस्तु !
तुम तो नहीं डूबे
नहीं नहाये मुझ में,
मेरी उमंगों की
न्योतती बाँहों के घेरे
सूने रह गये !
सिर्फ तुम्हारी प्रसन्नता के लिए
मर्यादाएँ प्रिय हैं,
अन्यथा
अमर्यादित हो रहे हैं
मेरे उद्वेग,
चाहते हैं तुम्हारी

परछाँइं नहलाना !
अतएव
जहाँ पर तुम हो
वहाँ तो खड़ी रहो !
ताकि मेरा यह
पुलकन छलकित
समर्पण
हो सके तुम्हारी
परछाईं का !

—:*:—

लुश का दिन

नग्न शिखरों पर चढ़ती
घुमावदार रेखाओं के सहारे
उतरते, मेमनों से नये-नये बादल,
हथेली पर हथेली की तरह
रखे हुये खेत,
नदी के मुड़ाव से झुके हुए गात,
धान रोपती उँगलियाँ
'धागुलों' की ठनक
और लहकते हाथ !
पहाड़ की चोटी पर बजता हुआ ढोल,
जीवन का 'मया' खींचते हुए
उमंगों के बैल,
लाँघ गया मेड़
पानी का छलकाव,
भीग गया क्वाँरी
धरती की मठमैली 'ठालकी' का छोर !

—:※:—

उत्तर काशी के यादीले सन्दर्भ

दूर तक फैली हुई हैं, पर्वतों की शृंखलाएं
फर-फरराती हैं उनीले, श्वेत मेघों की ध्वजाएं !

बज रहा है निर्झरों में, समय, शंखों के स्वरों सा
लग रहा है गाँव मुझको, देवताओं के घरों सा,
किन्नरों के साथ खेतों, में खड़ी है अप्सराएँ
दूर तक फैली हुई हैं, पर्वतों की शृंखलाएँ !

चीड़ बन की सीटियों में, व्यथाएँ खोयी हुई हैं
ढलावों की जाँघ पर, पगडंडिया सोयी हुई हैं,
वनस्पति के इशारों पर, नाचती हैं प्रेरणाएँ
दूर तक फैली हुई हैं, पर्वतों की शृंखलाएँ !

प्रार्थनाओं सी झुकी हैं, इन्द्र-धनुषों की कतारें
धूप से पुरने लगी हैं निम्न घाटी की दरारें,
डोलती हैं धानगंधी, हवा की अनगिन भुजाएँ
दूर तक फैली हुई हैं, पर्वतों की शृंखलाएँ !

चमकती स्लेटी छतों पर, और आँगन के किनारे
हर निमिष तेरा बुलावा, हर जगह मुझको पुकारे,
किन उभारों पर नहीं हैं, याद की मृदु मान्यताएँ
दूर तक फैली हुई हैं, पर्वतों की शृंखलाएँ !

—:*:—

नये की प्रतीक्षा

खुली हुई खिड़की
कभी बन्द नहीं की
मैंने !
मुझे एक भटके हुए
बादल की प्रतीक्षा है,
जो कमरे में लगी
सब तस्वीरें
धुंधली कर दे,
मेरे मुख को तरल कर जाए,
जो मेरी उदास क्षमताओं में
नयी मान्यता की
सिहरन भर जाए !
और मैं उठूँ
उत्कण्ठित होकर

खूँटी पर टंगे नये कमीज से
सब तस्वीरें पोंछ दूँ !
एक नयी चमक
दृष्टि पथ से अन्दर उतारूँ
वहाँ कई पुरानी खूँटियों का
बोझ उतर जाए
और उनमें आने वाला
हर नया बादल टँग जाए !
मुझे ऐसा प्रतीत हो
कि मैं कुछ नया ढो रहा हूँ !

—:*:—

चट्टानों से बही पानी की धारा,
मेघों के पीछे किरन शरमायी
मेरे गीतों की गायत्री !
न जाने कौन जंगल
कौन सी घाटी
लकड़ियाँ बीनते, घास काटते
तुम्हारी धड़कनों ने मुझको पुकारा ?
रंगों में तैर रही
वासन्ती शाम !
माटी के कागज पर
फूलों ने लिख डाला
अनदेखे सपनों की
देवी का नाम !

× × ×

वर्षा की वीणा पर
झरनों के गान !
वृक्षों की शाखाएं
गा रही मल्हार
धरती ने पहने हैं
मटमैले थान !
किसको बुला रहे हैं
केले के पात
किसके उच्छ्वास घिरे
मेघों के साथ !
किस क्षण ने दस्तक दी
सुधियों के द्वार,
किसके नयनों से
उगी यह बरसात !

× × ×

लेकर तुम्हारी गन्ध
झोंकों के पङ्ख मुझे
बार-बार छूते हैं !
तेरी सौं
पीपल के पत्ते भी
प्यार-प्यार कहते हैं !

बहुत कुंभला गया है
क्यों तेरा रूप ?
लगता है जैसे
फागुन के द्वार खड़ी
हेमन्ती धूप !

× × ×

शरद की उदास साँझ
डूब गया अन्धेरे में
शिखर पर खड़ा बाँज
कौन सी सुहागिन ने
शशि के दरवाजे
कुंकुम अक्षत ज्यों
अपनी अनामिका से
छींट दिए तारे !
सुधियों के क्षितिज बजे
सपनों के शंख
और घायल कर उठे
मुझे विसराये डंक !

× × ×

चिट्ठियाँ
जो तुमने मुझे लिखी थीं,
यादें
जिन्हें मैं लौटा नहीं सकता,
वादे
जिन्हें मैं पूरा नहीं कर सकता,
इरादे
जो अभी बने ही नहीं हैं
सब कुछ तुमने वापस माँगा है !
कोशिश करूँगा लौटाने की,
किन्तु
प्यार कैसे लौटाऊँ ?
क्या तुम्हें फिर से प्यार करूँ ?
उत्तर देना
वह चिट्ठी भी वापस कर दूंगा !

× × ×

प्रतीक्षित शिशिर के
स्वप्न सुमनों पर
जल्दी ही आयेगा
वासन्ती निखार !

फिल हाल तो
ऊषा के द्वार खड़ी
साँकल खड़-खड़ाती है
हेमन्त की बयार !

× × ×

जुट गये तारे शृंगार में
सांझ ने ज्योंही संवारी माँग
उपहार में छलक पड़ी चाँदनी
क्षितिज ने सिर पर उठाय चाँद !

× × ×

सूख गयी सरिता
किनारे हैं प्यासे
बाँहों के घेरे में
रेत उड रही है !

× × ×

मरमराते हुए
शिथिल हो रहे हैं
भोज पत्रों के आलिंगन !
मेरी स्मृति से
एक सन्दर्भ जुड़ गया,

जिन में निरन्तर कसाव था
ऐसी ऊष्ण स्पर्शी
उन्मादिनी बाहों का !

× × ×

तुम्हारी स्मृति के
चौखट पर
एक 'फोटो' जो मेरा है
फाड़ मत देना उसे,
क्योंकि तुमने
दूसरा दरवाजा
बनवा लिया है
दिवार पर जीवन की !

× × ×

परिधियों में छटपटाती मान्यता
व्यंग कसती है किसी विस्तार पर
और छोटा अर्थ द्योतक शब्द ही
फेंक देते हैं किसी अवतार पर !

× × ×

बाँज की डाली के पात बहुत हिलते हैं !
घुगतों का उदास नाच
वैसा ही गाना, कफू का रात-दिन
विजन में कराहना,
सूनी घाटियों में
चीखते झरने,
चीड़ और कोलईं के सीटी बजाते गाछ,
तुम्हारी याद आते ही
ये सब मेरे करीब आ जाते हैं !
और
फुनगी - फुनगी
दर्द मुस्कुराते हैं !

× × ×

आँसुओं की फसल
बाँहों के हँसिये से
काटता ही रहता हूँ
सच तुमने मुझे
बड़ा उत्पादक प्यार दिया !
अपनी फसल के
बारे में लिखना,

कच्चे पौधे को
काट मत देना,
धारा को सौंप कर
नन्ही सी बाल
कुन्ती मत बनना !
कुँवारे समर्पण से
पाप नहीं
पुण्य जनना !

× × ×

मैं आया था
अन्दर से तुम्हारे द्वार की
साँकल बन्द थी,
लौट आया अपने चिन्हों को नापता !
किन्तु
मेरा प्यार
जो दरवाजे और खिड़कियों के
अवरोध का कायल नहीं है
लेट गया तुम्हारे बगल में जाकर !
पाँवों के निशान
कोई नहीं देख पायेगा
बरफ बहुत जोर से गिर रही है !

बरखा की नींव पड़ी
क्षितिज पर छा गया
हथेली भर बादल !
घायल हो गयी घटा
भीग गया सारा दिन
भीग गयी रैन
एक घड़ी नहीं पड़ा
बूँदों को चैन !
मेरे हैं गीले नैन विवश
जैसे पावस के रैन-दिवस,
फिर इनको कौन सुखायेगा
दुनिया की चूनर गज भर की !

× × ×

लहरों की छाती पर
पुल बाँधें,
पार बिछी रेती की
छाती गरमाएँ
वहाँ कुछ गाएँ
प्यार की याद में
बीज बो आयें !

अंधेरे के हाथ लगे
शून्य को छीलने
सिन्दूरी संध्या के
चमकीले सपने
बिखर गए सूखी सी
आकाशी झील में !

× × ×

चीड़ों के वन सा हरिताभ
तुम्हारा अवगुंठन
मुझको करता है
मौन नमन !
तुम रुकी अनहिली डाली सी
स्वीकार पुष्प अंजुरी में भर,
लायी हो मेरे लिए हृदय
लायी हो मेरे लिए प्यार !
गंध का आह्वाहन !
विहगों की गान त्वरा
जाती रात के स्वर पर
उठा है दिवस का आरोह !

× × ×

हिल रहा है तुम्हारी
खिड़की का पर्दा
कैसे पुकारूँ
नीलाभ काँप उठेगा !
तेज धड़कनों की तरह
फड़-फड़ा रहे हैं
बाँज के पत्ते !
खेतों की सीढ़ियाँ
उतर-उतर चाँदनी
आ गई है तुम्हारी
सीढ़ी के पास,
मोहल्ले के सब कुत्ते
सो गये हैं
तरल अनुरोधों में
रौंदने का निमंत्रण
दे रही है घास !

× × ×

पंख डुले, हवा हिली
नीड़ों की ओर मुड़े चोंच,
मुक्त हो गया किसी
मुट्ठी से अंधकार,

टूट गयी पंक्ति
बिखर गए अक्षर
भरा - भरा लगता है
शून्य का प्रसार,
कितना विशाल था
यह किसी का नाम !

× × ×

बांसों के झुरमुट से
रोज मुझे दिखाई देता है
रात की कजरारी
आँखों में तैरता हुआ
नीले पन्ने पर लिखा
एक पत्र,
ऊपर लिखा है–
मेरे चाँद !
फिर सारे पत्र पर
विसर्ग ही विसर्ग हैं !

× × ×

स्वागत द्वार पर
तोड़ कर लगायी गयी हैं
टहनियाँ
हरी - हरी पत्तियाँ,
टूट गये कई स्वप्न
अनखिले प्रसूनों के,
धरती की कोख कहीं
टीस उठी,
झोंकों के हाथों से
छिन चुके खिलौने
समारोह : हत्याएँ !

× × ×

आवृत विश्वासों का
ऐश्वर्य हीन माधुर्य
मुँह खुले वातावरण में
चरम एकान्त की
अनुभूति पी रहा है।
हर भय से रक्षित
धड़कता हृदय
तुम्हारे लिए फिर भी शंकित है!

कसक गाती है!
जब किस के
गीत की बेला
धुएँ सी लिपट जाती है!

× × ×

याद के फूलों का
सुरभि मय हास
परिक्रमा दे रहा है मेरी;
और मैं
परिधि बना घूम रहा हूँ
तेरी!
यह भटकाव है
या
मेरे केन्द्र में
तुम मुस्कुरा रही हो.

× × ×

सफलता की प्रतीक
या असफलता की प्रतिक्रिया,

दृष्टि सम्मेलन में
धड़कनों की तालियां!
अनुपस्थिति में भी
उपस्थिति का भान
मौन सभा प्यार की
शुरू हो गयी!

× × ×

सपन चुभते हैं!
किसी की
याद का बिस्तर
लगा जब नयन सोते हैं!

× × ×

रस भीगे झोंकों पर
सुधियों की नजर गयी!
माँग में दिशाओं की
गोधूली संवर गयी!

× × ×

जगमगाती पाँतों में
वर्ण - वर्ण बिखरे हैं
साँवरे कपोलों पर
चुंबन से निखरे हैं!
तारों की कविता से
भरा हुआ तिमिर पत्र
क्षितिज नहीं पढ़ पाया
बीत गये कई सत्र!

× × ×

अम्बर के रंध्रों में
फूँक नहीं मार सका
अनगाया जीवन का
मधु भीगा याम गया!
जले - जले छन्दों में
घायल अरमानों का
चुपके से शिखरों ने
संदेशा थाम लिया!

× × ×

उजली सी वेला ने
कजरारे घूंघट में
थके-थके सपनों को
रात का विराम दिया !

× × ×

विस्मृति के
मुरझाये हुए गुलाब खिले
तुम्हारी याद ने
सींच डाली आँखें !
तुम्हें छूकर गंध पुलकित
सभी झोंके लौटे.
मौसम की पपड़ीले
होठों पर
फूलों के पौधे उगआये !

× × ×

क्षितिज पर
केसर की अंजुलियाँ
बिखराता
कल सुबह का सूरज
इन्हें बांच सके

अतएव
रात की ऋचाएं
दूब पर बिखरी हैं !

× × ×

उमंगों के फूट आये थे उरोज
आरसी सा समर्पण
लायी थी लहर,
शून्य का आकार घटा
विकल एक निश्वास उठा
छा गयी आर-पार
पागल सी एक घटा,
गंदला हो गया
किनारों का प्यार !

× × ×

धुल गया है
वासना का मट मैला चीर !
धुले-धुले लगते हैं
रतियारे मेह !
मन में छुपये हुए
सुधियों की रेल

पाँवों में सिमट गयी
सरित की देह।

× × ×

शिखरों पर
मेघ घिरे होंगे!
चीड़ के थुनरों पर
घाटी में
बरफ के फूल झिरे होंगे
इस वर्ष भी!

× × ×

रातों को
स्वप्न फिरे होंगे!
बाहों के तकिए पर
भग्न वृन्त
आँसू के फूल झिरे होंगे
इस वर्ष भी!

× × ×

तुमने यादों को
थाम लिया होगा।
छज्जे पर फुदकते

पहाड़ी-पखेरू ने
जब मेरा नाम लिया होगा
इस वर्ष भी !

× × ×

घाटी में फैल गया घाम !
झरने की खूँटी पर
टाँग दिया किरणों ने
सुबह-सुबह फिर तेरा नाम !
लहराये फसल भरे खेत !
उमक उठी प्राणों के
आस-पास बिछी हुई
हिम डूबी यादों की रेत !
चीड़ हिले पर्वत के पाँव !
आँखों में काँप उठे
सपनों के सिंहासन
आँसू के ठहरे से गाँव !

—:*:—

शंखमुखी शिखरों पर

देवदारु घिरा पंथ झोंके हैं साथ
शंखमुखी शिखरों पर चाँद घुली रात !
पास कहीं बजती है झरनों की बाँसुरी
नयनों में छलक पड़ी एक बूँद आँसुरी !
शब्द हीन चरणों से टाँग गयी मेनका
विस्मृति की वेणी पर एक फूल याद का !
परिचित सी छाँह हिली श्रृंग के उतार में
मन चाही पीर मिली चीड़ की बयार में !
न्योतती दिशाओं के आग्रह का क्षामकण्ठ
गन्धुमी व्यतीत पत्र थमा गया हाथ !
माटी के सपनों की नयी-नयी घास
चूम रही मेरा मन पैरों के पास !
रेखा सी राह बिछा पहचाना प्यार
लगता है दूर कहीं घाटी के पार !
चूड़ी की छमक मुझे टेरती थकी
काजल की रेख मोड़ हेरती थकी !
चञ्चल मुस्कानों के रेशमी पखेरू
हिला गये शून्य बीच एक नयी बात !

—:*:—

आञ्चलिक

कोलई=वृक्षविशेष। ओबरा=मकान की पहली मञ्जिल। शुङ्ग का दिन=धान रोपने का प्रथम दिन। धागुला=हाथ का एक आभूषण (कड़ा)। मया=धान के खेत को चौरस करने के लिए लकड़ी का एक उपकरण। ठालकी=स्त्रियों का शिर ढकने का वस्त्रविशेष (पिछौर)। बाज=पर्वतीय वृक्ष।

शुद्धाशुद्ध

अशुद्ध	शुद्ध	पंक्ति	पृष्ठ
उर्ध्वगामी	ऊर्ध्वगामी	५	१२
जाऊँगा	जाऊँ	६	३५
छुभन	चुभन	१२	४२
स्मृति को	स्मृति के	३	४६
मृग तृष्णा	मृगतृष्णा	७	५३
द्वन्द	द्वन्द्व	६	५८
उमगों	उमंगों	८	६०
कौन	कौन से	५	६७
सू ख	सूख	६	७१
आंसुओं क	आँसुओं की	१३	७३
पड़	पड़ी	१	७५
धड़ी	घड़ी	७	७५
गिमंत्रण	निमन्त्रण	१५	७७
सुक्त	मुक्त	१६	७७
वाताबरण	वातावरण	१४	७६